विपश्यना

[साधकों का मासिक प्रेरणापत्र]

रजि. नं. १९१५६/७१ पोस्टल रजि. नं. (M) NS (C) 36

वर्ष १० • बम्बई • बुद्धवर्ष २५२५ • ज्येष्ठ पूर्णिमा [शक] • दि. १७-६-१९८१ • अंक १३

साधुवाद !

इस अंकके साथ "विपश्यना" पत्रिकाके प्रकाशनके दस वर्ष पूरे हो रहे हैं। प्रकाशन आरंभ करनेसे लेकर आज तक जिन भाई-बहनोंने जिस किसी भी प्रकारका सहयोग प्रदान किया, उन सबके अत्यंत आभारी हैं। आभारी हैं उन सबके जो लोग आजीवन शुल्क जमाकर अथवा प्रतिवर्ष वार्षिक शुल्क भेजकर सहयोग प्रदान करते रहे हैं। आभारी हैं उन सभीके जिन्होंने शुल्क देनेमें असमर्थ साधकों तक पत्रिका पहुँचानेमें मदद स्वरूप "मंगल कामना" रूपी विज्ञापन भेजकर आर्थिक सहायता प्रदान की। आभारी हैं उन साधकोंके जिन्होंने अपने अनुभव और लेख भेजकर विपश्यना पत्रिकाकी उपयोगितामें वृद्धि की। आभारी हैं उन समस्त साधकों/पाठकोंके जिन्होंने पत्रिकामें रुचि और आस्था कायम रखी और इसकी अनियमितताकी कमजोरीको मौन रहकर सहन करते हुए हमारा उत्साह-वर्धन ही करते रहे। और अत्यंत आभारी हैं पूज्य गुरूदेवके जो अत्यंत व्यस्त रहते हुए भी समय निकालकर उद्बोधक लेख व हिन्दी और राजस्थानी दोहे देकर पत्रिकाको सही मानेमें साधकोंके लिए प्रेरणा-प्रदायिनी बनाते हैं। उनके दोहों तथा प्रेरणात्मक लेखोंको पुस्तकोंके रुपमें छपवानेकी मांग उत्तरोत्तर बढ़ती ही जा रही है परन्तु समयाभावसे अब तक प्रकाशित नहीं करवा पाए।

गत वर्ष मई महीनेमें भेजी गई प्रश्नावलीका उत्तर देते हुए अनेक साधकोंने बड़े उपयोगी सुझाव भेजे हैं जिनका हम सहर्ष स्वागत करते हैं। अनेकोंका प्रस्ताव है कि पत्रिकाका कलेवर बढ़ाया जाय और इसे पुस्तकाकार किया जाय। हम भी चाहते हैं परन्तु अनेक व्यवहारिक कठिनाइयोंके कारण फिलहाल संभव नहीं है। इसी प्रकार अनेकोंने कागजकी बढ़ती हुई मंहगाई और छपाईमें हुई वृद्धिके अनुसार आजीवन एवं वार्षिक शुल्कमें वृद्धिका प्रस्ताव किया है। अनेकोंकी मांग है कि पत्रिकाका मराठी, गुजराती और अंग्रेजी संस्करण भी निकाला जाय! सरल हिन्दीका प्रयोग हो! प्रकाशन नियमित हो ताकि भावी कार्यक्रमोंकी समय पर जानकारी मिल सके। प्रश्नोत्तर एवं शंका-समाधानको बढ़ावा दिया जाय! कागज अच्छा हो, छपाई मोटी हो, आकार-प्रकार छोटा हो ताकि लंबे अर्से तक संभालकर रखी जा सके। कइयोंका सुझाव है कि इसे अर्ध-मासिक बनाया जाय! वार्षिक अंक प्रकाशित हों जिनमें साधकोंके अनुभव व विचारोंका समावेश हो! दोहोंका संकलन प्रकाशित हो! जातक कथाएँ एवं प्रमाणित पुस्तकोंके दृष्टांत प्रकाशित हों! पूर्व प्रकाशित लेखोंका संग्रह प्रकाशित हो, भले इसके लिए अलगसे कीमत भी वसूल की जाय! सयाजी ऊ बा खिन, माँ सयामा एवं गुरुजीके जीवन-परिचय भी समय-समय पर प्रकाशित हों ताकि उनके उज्वल जीवनसे साधकोंको प्रेरणा प्राप्त हो! ऐसे अनेकानेक सुझाव हैं जिन पर हम मननशील हैं और यथासंभव सुधारके लिए प्रयत्नशील भी। परन्तु अनेक व्यवहारिक कठिनाइयोंके कारण उपरोक्त सभी सुझावोंको क्रियान्वित किया जाना अभी संभव नहीं है। जैसे-जैसे आवश्यक साधन-सुविधाओंमें वृद्धि होगी और पर्याप्त संख्यामें सेवाभावी कार्यकर्ता उपलब्ध होंगे, यथासंभव उन्हें पूरा करते जायेंगे।

सबके प्रति पुनः पुनः साधुवाद व्यक्त करते हुए,

विनम्र

संपादक एवं व्यवस्थापक मंडल।

धम्म वाणी

सेलो यथा एकघनो वातेन न समीरति।
एवं निन्दा पसंसासु न समिञ्जन्ति पण्डिता॥

धम्मपद ६/६.

जिस प्रकार ठोस पर्वत हवासे डोलायमान नहीं होता। इसी प्रकार समझदार व्यक्ति निन्दा और प्रशंसासे विचलित नहीं होते।

साधकों के उद्‌गार

कोल्हापूरके श्री राजाराम बेरी लिखते हैं,

" हम दोनों (मैं और मेरी पत्नी) नित्य नियमित ध्यान करते हैं और पहलेसे कहीं अधिक प्रगति और प्रसन्नता अनुभव करते हैं।

पिछली फरवरीके शिविरमें शामिल होनेके पूर्व मुझे केवल गर्दन तक स्पष्ट संवेदनाएँ महसूस हुआ करती थीं और उससे नीचेके भागोंमें बहुत कम संवेदना जागती थीं। इस बार मैंने शिविरमें देर तक निरन्तरतासे ध्यान किया, जिसके कारण अब मुझे शरीरके अधिकांश भागोंमें संवेदनाएँ महसूस होने लगी हैं। लेकिन ये संवेदनाएँ अभी शरीरके बाहरी स्तरतक ही सीमित हैं। कभी-कभी एकाएक कंधों और घुटनों पर एकाध तीव्र संवेदना मचल उठती है और कभी बिना किसी प्रयत्नके ही पेट भीतरकी ओर धंसने लगता है।

कृपया विपश्यना पत्रिकाके माध्यमसे बताइए कि क्या मैं इन बाहरी-बाहरी संवेदनाओ को नियंत्रित करनेका प्रयास करूं अथवा बाहरी संवेदनाओंकी जैसी होती हैं, होने दूं और उन्हींके साथ आंतरिक संवेदनाओंको जाननेका प्रयास जारी रखूं ?

हमें यह जानकर प्रसन्नता हुई है कि विपश्यना साधना अनेक लोगोंमें विख्यात हो रही है और इस कारण आप दिन पर दिन पहलेसे अधिक व्यस्त होते जा रहे हैं। लेकिन मुझे विश्वास है कि उपरोक्त प्रश्नोंका उत्तर पत्रिका द्‌वारा देनेका समय अवश्य निकाल सकेंगे।

उत्तर :

यह सत्य है कि लंबे अर्से तक अभ्यासकी निरंतरता द्‌वारा ही सारे शरीरकी मूर्छा दूर होती है और सारे शरीरमें संवेदनाएँ महसूस होने लगती हैं। सामान्यतया प्रारंभमें जो संवेदनाएं प्रकट होती हैं वे अधिकतर स्थूल ही होती हैं और शरीरके बाहरी-बाहरी भाग पर ही अनुभव की जाती हैं। इन संवेदनाओंकी अवहेलना न करें। सिरसे पांव तक यात्रा करते हुए इन संवेदनाओंको ही तटस्थभावसे देखें। यह भी समझते रहें कि हम संवेदनाओंका निर्माण नहीं कर रहे हैं। जो कुछ हो रहा है वह कुदरतन हो रहा है। हम इन स्थूल संवेदनाओंको रोकना चाहें तो रोक नहीं सकते और इन्हे सूक्ष्म संवेदनाओंमें पलटना चाहें तो पलट नही सकते। हम संवेदनाओंका निर्माण नहीं कर सकते। इसीलिए साधना करते समय भोक्ताभावतो दूर हो ही, कर्ताभावका सारा अहं भी दूर होना चाहिए। केवल साक्षीभाव पुष्ट होते रहना चाहिए।

शरीरके बाहरी स्तर पर जो स्थूल संवेदनाएं प्रकट हो रही हैं उन्हें यदि साक्षीभावसे देखते रहें तो समय पाकर इनका समापन होगा ही और इनकी जगह किसी प्रकारकी सूक्ष्म संवेदना सारे शरीरमें महसूस होने लगेगी और तब शरीरका कोई भी हिस्सा मूर्छित नहीं रह पायेगा। न ही शरीरके किसी हिस्से पर कोई घनीभूत संवेदना रहेगी। ऐसी अवस्था में सरलतासे शरीरके भीतरकी संवेदनाओंकी अनुभूति होने लगेगी। जब तक शरीरके किसी हिस्सेपर मूर्छा है या अर्ध मूर्छा है अथवा घनीभूत संवेदना है, तबतक शरीरके भीतरकी संविदनाओंको जान सकना सरल नहीं है। अतः जो संवेदनाएँ बाह्य स्तर पर प्रकट हो रही हैं उन्हे ही साक्षीभावसे देखते रहनेका अभ्यास पुष्ट करना चाहिए ! ★

अलवरके एक साधक लिखते है :

" विपश्यनाका पहला शिविर दिल्लीमें और दूसरा जयपुरमें किया। निरन्तर विपश्यनाका अभ्यास करता हूँ। परन्तु कुछ शंकाएँ है, कृपया समाधान भिजवानेका कष्ट करें।

१. विपश्यना ध्यानसे ऐसा लगता है कि मन चिंताओं, संकल्प-विकल्पोंसे मुक्त रहता है जिससे अत्याधिक मात्रामें शक्ति एकत्र होती है जो वासनाका कारण बनती है। विपश्यनासे जहाँ (अन्य) दुर्गुणोंका नाश होता है वहाँ कहीं मन वासनासे चंचल तो नहीं होता ? उसे नियमित करने हेतु स्वाध्यायका सहारा लेना पड़ता है।

२. विपश्यनासे शायद गर्मी उत्पन्न होती है ! उस गर्मीसे मलद्‌वारसे रक्त जाने लगता है। अधिक बार ध्यान करनेसे ऐसा महसूस होता है। हो सकता है इसमें विपश्यना का दोष न होकर अधिक बैठनेसे या अन्य शारिरीक कारणोंसे भी ऐसा हो सकता है।

३. विपश्यनामें थोड़ी-थोड़ी देर बाद झटके से लगने लगे हैं। झटके लगते वक्त ऐसा लगता है कि जैसे एकदम सोतेसे जागा होऊं। परन्तु सोया भी तो नहीं था। यह तभी होता है जब मानसिक विचार अधिक मात्रामें शांत होने लगते है।

४. विपश्यना ध्यानमें भी संवेदनाओको देखनेका कार्य करना पड़ता है। जहाँ कुछ करना पड़े ध्यानकी वह स्थिति नहीं होती। ध्यान तो व्यक्तिका सहज स्वभाव है। विचारहीन होना ही तो ध्यान है। फिर करना तो बोझासा लगता है।

५. आपके संसर्गमें रहकर निरंतर इस ध्यान प्रक्रियाकी गहराईमें जानेको मन करता है। परन्त परिवारका उत्तरदायित्व रहनेके कारणसे राजकीय सेवामें रहना पड रहा है। निरंतर ध्यान तो कर रहा हूँ परन्तु एक ही तरहकी संवेदनाएं निरंतर महसूस होती रहती हैं। न वे अच्छी-बुरी जैसी लगती हैं, न उनकी गहराईमें ही जाया जाता है। हाँ, निर्विचारताकी स्थितिसी महसूस होनेके कारण आनंदका अनुभव अवश्य होता है।

उत्तर :

१) विपश्यना साधना द्‌वारा मनमें वासना नहीं बढ़ सकती। विपश्यना विधिवत की जाय तो मनके भीतर संग्रहित सभी विकारोंका क्षय हो जाता है। वासनाके विकारोंका भी क्षय होता ही है। जिस समय चित्त शांत होने लगता है, चिंताओं और संकल्प-विकल्पोंसे मुक्त होने लगता है तो बिना ही प्रयत्न किए हुए नैसर्गिक तौर पर अर्धचेतन और अचेतन मनका आपरेशन होना शुरू हो जाता हैं। अन्तर्मनकी गहराइयोंमें जो भी सुसुप्त विकार हैं वे उदीर्ण होने लगते हैं और चेतन चित्त पर प्रकट होने लगते हैं। यदि अन्तर्मनमें वासनाके विकार दबे हुए हैं तो उनका उभार आना स्वाभाविक ही है

और कल्याणकारी भी है। उस समय इन उभरे हुए विकारोंको साक्षीभाव से देखना शुरू कर दें। स्वाध्याय और चिंतन-मननका अपना महत्व है उनके द्वारा बद्धिके स्तर पर और चेतन चित्तके स्तर पर कुछ लाभ अवश्य होता है। पर जैसे विपश्यना में होता है वैसे विकारोंका उपशमन नहीं होता, उनकी निर्जरा नहीं होती, वह जड़से नही उखड़ते। बल्कि फिर अन्तर्मनकी गहराईयोंमें दबा दिए जाते हैं। इसलिए विपश्यना करते हुए चित्त शांत होनेपर जब कभी गहरा आपरेशन हो जाय और अन्तर्मनकी तलस्पर्शी गहराइयोंसे कोई विकार उभरकर बाहर आए तो एक ओर इस सच्चाईको स्वीकार करना चाहिए कि मेरे ही किसी पूर्व संचित विकारकी गंदगी उभरकर बाहर आयी है और दूसरी ओर शरीर पर होनेवाली तत्कालीन संवेदनाओंको साक्षीभावसे देखना शुरू कर देना चाहिए। वैसे तो जो भी विकार जागेगा उसका संबंध सारे शरीर पर सहजभावसे होनेवाली संवेदनाओंसे हो जायेगा। परन्तु यदि वासनाका विकार जागा है तो अच्छा हो कि उस समय कुछ देर तक अपनी जांघों पर होनेवाली संवेदनाओंको तटस्थभासे देखते रहें और थोड़ी-थोड़ी देरके बाद मनको पगथलियोंकी ओर ले जाय। समता बनी रहे। इस प्रकार वासनाके विकारकी परतें उतरती चली जायेंगी और समय पाकर इस विकारसे पूर्णतया मक्ति मिल जायेगी।

२. विपश्यना करते हुई शरीरमें किसी भी प्रकारकी संवेदना उत्पन्न हो सकती है विपश्यनाकी गहराइयोंमें जानेपर अधिकतर जो भी संवेदानाएं उत्पन्न होती हैं उनका हमारे पूर्व संचित विकारोंसे गहरा संबंध होता है। ईर्ष्या, द्वेष जैसे पूर्व संचित विकारोंकी उदीर्णासे गर्मीकी संवेदना उत्पन्न होती है। यह स्वाभाविक है। परन्तु इससे किसीकी हानि नहीं हो सकती। उसे समताभरे चित्तसे देखते रहें। विकारोंके साथ-साथ इस गर्मीका भी उपशमन होगा ही। मलद्वारसे रक्त निकलता हो तो मनमें समताभाव रखते हुए इस शारीरिक रोगकी चिकित्सा किसी योग्य चिकित्सकसे करानी चाहिए।

३. विपश्यनाके अभ्यास द्वारा जैसे-जैसे चेतन चित्तके विकारोंका क्षय होने लगता है वैसे-वैसे विचार कम होने लगते हैं और मन अपनी ही गहराइयोंकी पैठने लगता है। यही अन्तर्मनकी गहराइयोंका आपरेशन है जिसकी वजहसे कोई दबा हुआ विकार छेड़ दिया जाता है और उसकी उदीर्णा होती है तो कभी झटकके रूपमें भी प्रकट होती है। उससे घबराना नहीं चाहिए। बल्कि उसके प्रति अनित्य बोध कायम रखते हुए उसे समता से देखना चाहिए।

४. विपश्यी साधक शनैः शनैः अभ्यास द्वारा भोक्ताभावकी पुरानी आदतसे मुक्त होता है और इसी प्रकार कर्त्ताभावसे भी। वह यह तथ्य अपनी अनुभूतियोंसे जानने लगता है कि शरीरकी सीमाओंके भीतर जो भी घटना घट रही है उस पर उसका कोई अधिकार नहीं है। अतः उसके प्रति कर्त्ताभाव रखना अपने अहंभावका पोषण करना है जो की विपश्यनाके विरुद्ध है। विपश्यना साधना द्वारा भोक्ताभावसे ही नहीं, कर्त्ताभावसे भी मुक्ति पानी चाहिए। केवल साक्षीभावसे देखना है। याने जो हो रहा है उसे तटस्थभावसे जानना है। केवल जानने में और कुछ करनेमें बहुत बड़ा अन्तर है। केवल जाननेमें बोझ नहीं लग सकता। कुछ करनेमें बोझ भले लगे। नैसर्गिकभावसे जो घटना घट रही है उसके प्रति द्रष्टाभाव, ज्ञाताभाव रखना कर्त्तापन नहीं है। अभ्यासकी परिपक्वतामें एक समय ऐसा भी आयेगा ही जबकि अहं की सूक्ष्म भ्रांति भी नष्ट होगी। अनात्मभाव पूरी तरह पुष्ट होगा तो द्रष्टापन भी विलीन हो जायेगा 'केवल दर्शन' और 'केवल ज्ञान' ही रह जायेगा, जिससे कि कैवल्य प्राप्त होगा, मुक्त अवस्था प्राप्त होगी।

सूचनाएँ

प्रत्येक महिनेके दूसरे शुक्रवार (Second Friday of every month) की शामसे सोमवारकी सुबह तक जयपुरके 'विपश्यना केन्द्र' में दो दिवसीय स्वयं-शिविर श्री. रामसिंहकी देख-रेखमें लगा करेंगे।स्थानीय लोगोंके अतिरिक्त आस-पासके पुराने साधक भी अपनी सुविधानुसार इनमें सम्मिलित होकर केन्द्रकी धर्म-तरंगों एवं अनुकूल शिविर-सुविधाओंका लाभ उठा सकते हैं।

काठमांडूके विपश्यना-केन्द्रके ट्रस्टियों एवं परामर्शदात्री समितिके सदस्योंके नाम :-

ट्रस्टी : श्री मणिहर्ष ज्योति, श्री यदुकुमार सिद्धि, श्री द्वारकाजी मानंधर, श्री शक्तिदास श्रेष्ठ, एवं श्री विश्वनाथ जाजोदिया।

प. समितिके सदस्य : श्री तीर्थनारायण मानंधर, श्री पूर्ण सिद्धि, श्री आशाराम शाक्य, सुश्री नानीमैया मानंधर, श्री सानुभाई डंगोल, श्री नीलवीर सिंह, श्री विनयरत्न स्थापित, श्री प्रेमकृष्ण श्रेष्ठ, श्री दुर्गा रेग्मी, श्री आनंदराज, एवं श्री कुलरत्न।

रक्सौल केन्द्र के सदस्य : श्री भक्तिदास श्रेष्ठ, श्री द्वारकाप्रसाद सीकरिया, जगदीस प्रसाद सीकरिया, श्री श्यामलाल सिकका, श्री विश्वनाथ शाह, सरदार सुविन्दर सिंह, श्री नथमल केडिया।

बाराचकिया केन्द्र के सदस्य : श्री शिवकुमार मुल्तानिया, श्री रामगोपाल सीकरिया, श्री राधाकिसन सीकरिया, श्री तोलाराम तुलस्यान, श्री रामप्रसाद पोद्दार, श्रीमती नर्वदादेवी तोदी, श्री टोडरमल चनानी।

इगतपुरी में स्वयं शिविर (केवल पुराने साधकों के लिए)

शिविर क्रमांक	८१	दि.	२१-६-८१ से	२-७-८१ तक
,, ,,	८२	,,	२-७-८१ से	१३-७-८१ ,,
,, ,,	८३	,,	१३-७-८१ से	२४-७-८१ ,,
,, ,,	८४	,,	२४-७-८१ से	६-८-८१ ,,

संपर्क : व्यवस्थापक, विपश्यना विश्व विद्यापीठ, धम्मगिरि, इगतपुरी-४२२४०३ (नासिक) फोन नं.-७६

आगामी शिविर

शिविर क्रमांक : १९८ हैदराबाद (विपश्यना अन्तर्राष्ट्रीय साधना केन्द्र, १२.६ कि. मी. नागार्जुन सागर रोड, कुसुम नगर)
दि. २१-७-८१ से १-८-८१ तक (हिन्दी)

संपर्क सूत्र : १) श्रीमती ऊषा पी. मेहता, ६१, श्रीनगर कॉलोनी, हैदराबाद-५०००८७३(आं. प्र.) फोन : ३०२९१ अथवा
२) श्री पूरनमल अग्रवाल, द्वारा-होटल राजधानी, सिद्दिअम्बर बाजार, हैदराबाद-५०० ०१२ (आं. प्र.) फोन : ५७५७१

Aug. 13-Aug. 24 No. **199** Kyoto, JAPAN. contact: Steve Schmandt, 17 Zenami-cho, Mukaijima, Fushimi-ku, Kyoto 612. tel. (075) 621-4611

Sept. 1-Sept. 12 No. **200** California, U. S. A. contact : Dr. Jacques Tenzel, P. O. Box-1128, Mendocino 95460 tel. (707) 934-0485

Sept. 27-Oct. 8 No. **201** Sydney, AUSTRALIA. contact : Vipassana. Foundation, Box1685, North Sydney, 2060 N. S. W.

Oct. 8-Oct. 18 No. **202** Perth, AUSTRALIA. contact : Doug Solomon, 166 Marine Parade, Cottesloe 6011 W. A. tel 384 0371

लघु शिविर — इगतपुरी, (केवल पुराने साधकों के लिए) दि. १-११-८१ से ८-११-८१ तक (हिन्दी)

संपर्क – व्यवस्थापक, विपश्यना विश्व विद्यापीठ, धम्मगिरी, इगतपुरी-४२२ ४०३. (नासिक) महाराष्ट्र फोन नं. ७६.

शिविर क्रमांक २०३ जयपुर, (विपश्यना केन्द्र, धम्मथली, गल्ताजी रोड,) दि. २१-११-८१ से २-१२-८१ तक (हिन्दी)

संपर्क – श्री श्यामसुन्दर मूंदड़ा, जी-१/ए, अशोक मार्ग, सी-स्कीम, जयपुर-३०२ ००१, फोन नं. ६३३२-६५४१४ तार-डॉली.

तार : डॉली फोन : ६७८४७/६५४१४

मेसर्स शिव शंकर एण्ड कंपनी

जी १/ए, अशोक मार्ग,सी-स्कीम, जयपुर-३०२ ००१. (राज.)

की मंगल कामनाओं सहित

↓

दूहा धरम रा

करली कूड़ी कल्पना, बिमल सत्य स्यूं दूर ।
धोखो ही पल्ले पड़्यो, भरम भ्रांति भरपूर ॥
भोगत ही भोगत र यो, सुखद दुखद परपंच ।
भोगत भोगत भोगतां, चैन मिली ना रंच ॥
जद स्यूं सीख्यो देखणो, मिली चित्त नै चैन ।
व्याकुलता सगली मिटी, सांत र वै दिन रैन ॥
भोगी होकर भोगतां, बिकल र यो नादान ।
योगी होकर देखतां, मिली सांति की खान ॥
इन्द्रिय सुखको बावला !, क्यां को हरख मनाय ।
उदय अस्त को खेल है, ज्यूं आयो त्यूं जाय ॥
इन्द्रिय दुख को बावला !, क्यां को रंज मनाय ।
उदय अस्त को खेल है, ज्यूं आयो त्यूं जाय ॥

दोहे धर्म के

जब जब जागे वासना, जब जब जागे क्रोध ।
तब तब प्रज्ञा प्रबल कर, जगा धरम का बोध ॥
मत विकारका दमन कर, मत दे पूरी छूट ।
दो अंतोंको जो तजे, समता जगे अटूट ॥
जब जब अन्तरजगत में, जागे चित्त-विकार ।
खुद भी व्याकुल हो उठे, विकल करे संसार ॥
देखे प्रकट विकार को, सहज शमन ही होय ।
देख सांस संवेदना, मुक्त दुखों से होय ॥
अपने संचित कर्म की, जब उदीर्णा होय ।
तब समता से देखते, सहज निर्जरा होय ॥
सम्यक् दर्शन ज्ञान से, अंतर संवर होय ।
नए कर्म बांधे नहीं, क्षीण पुरातन होय ॥

सयाजी ऊ बा खिन मेमोरियल ट्रस्ट के लिए मुद्रक, प्रकाशक एवं संपादक : रामप्रताप यादव, ग्रीन हाऊस, २ री मंजिल, ग्रीन स्ट्रीट, फोर्ट, बम्बई २३. टेलीफोन : ३१३५१०. ◉ मुद्रण स्थान : अक्षरचित्र मुद्रणालय, सातपुर, नासिक ४२२ ००७. टेलिफोन ८८२५१ ◉ पत्रिका में विज्ञापन दर : आधा पृष्ठ रू. ५००/-, चौथाई पृष्ठ रू. २५० /- ◉ वार्षिक शुल्क रू. ५/-, आजीवन शुल्क रू. ५१/-

---

विपश्यना "

Licence No. NS 18
Licensed to post without pre-payment

पो. रजि. नं. (M) NS (C) 36

प्रेषक :

सयाजी ऊ बा खिन मेमोरियल ट्रस्ट
विपश्यना विश्व विद्यापीठ
धम्मगिरि, इगतपुरी-४२२ ४०३.
(नासिक, महाराष्ट्र)